

धीरेंद्र नाथ गोराई और सुबल चंद्र शॉ और अन्य

बनाम

सुधीर चंद्र घोष और अन्य

(के.सुब्बाराव, केसी दास गुप्ता, रघुबर दयाल जे.जे.)

निष्पादन- डिक्री के निष्पादन में ऋण के संबंध में न्यायालय द्वारा सम्पत्त की बिक्री -निर्णित ऋणी द्वारा मूल्यांकन के सम्बन्ध में नोटिस की तामील के उपरान्त भी आपत्ति नहीं की-विक्रय को अपास्त कराने हेतु आवेदन पत्र -इस आधार पर कि धारा 3 बंगाल धन ऋणदाता अधिनियम के प्रावधान की पालना नहीं की गई - पोषणीयता - यदि, विक्रय वैध-बंगाल धन ऋणदाता अधिनियम 1940 (1940 का 10) -धारा 35 सिविल प्रक्रिया संहिता- 1908 (1908 का वी) आदेश 21 नियम 64, 66 और 90

एक बंधक मुकदमे में पारित डिक्री के निष्पादन में, अपीलकर्ता ने निष्पादन आवेदन में एक अनुसूची संलग्न की जिसमें दावे की संतुष्टि के लिए 11 संपत्तिया को बेचने की मांग की गई थी। अपीलकर्ता ने उक्त सम्पत्तियों का मूल्यांकन किया. यद्यपि प्रत्यर्थी संख्या-1 को सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 21 नियम 66 के तहत नोटिस प्राप्त हुआ. उसने मूल्यांकन पर कोई आपत्ति दर्ज नहीं करायी. हालाँकि उसने कई बार बिक्री स्थगित कर भुगतान करने का वादा किया, लेकिन वह ऐसा करने में विफल रहा। अंत में, उक्त सम्पत्तियों में से दो को बेच दिया गया। तब

प्रत्यर्था संख्या-1 ने निष्पादन न्यायालय में आदेश 21 नियम 90 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत उक्त बिक्री को रद्द करने के लिए आवेदन अन्य बातों के साथ-साथ, इस आधार पर दायर किया कि एस. बंगाल ऋणदाता अधिनियम की धारा 35 का अनुपालन नहीं किया गया। विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया कि बिक्री के प्रकाशन और संचालन में कोई धोखाधड़ी नहीं थी, बेचे गए लॉट की कीमत उचित थी और धारा 35 अधिनियम के उल्लंघन के कारण बिक्री दूषित नहीं हुई थी। अपील पर, उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि प्रत्यर्था संख्या-1 को कोई महत्वपूर्ण क्षति नहीं हुई थी, धारा 35 अधिनियम के प्रावधान आज्ञापक थे और इसलिए उक्त प्रावधानों का उल्लंघन बिक्री को अमान्य करता है। इस न्यायालय में अपीलार्थियों की ओर से यह तर्क दिया कि यदि अधिनियम की धारा 35 आज्ञापक या निर्देशात्मक थी, उक्त प्रावधान का उल्लंघन करते हुए आयोजित बिक्री केवल अवैध थी, लेकिन अमान्य नहीं थी और इसलिए, इसे केवल आदेश 21 नियम 90 सिविल प्रक्रिया संहिता में निर्धारित प्रक्रिया व कारणों से अपास्त किया जा सकता था और चूंकि उत्तरदाता बिक्री की घोषणा के तैयार होने पर उपस्थित नहीं हुए थे, इसलिए बिक्री को उनके आग्रह पर अपास्त नहीं किया जा सका।

माना गया: अधिनियम की धारा 35 की पालना नहीं किया जाना बिक्री के प्रकाशन या संचालन में दोष या अनियमितता है। एक पक्षकार जिसे उद्घोषणा की सूचना प्राप्त हुई लेकिन उद्घोषणा तैयार करने में

उपस्थित नहीं हुआ या उक्त दोष पर आपत्ति नहीं जताई, वह आदेश 21 नियम 90 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत आवेदन नहीं कर सकता है। भले ही वह कर सकता हो, तो भी बिक्री को तब तक रद्द नहीं किया जा सकता जब तक कि उक्त दोष या अनियमितता के कारण उसे पर्याप्त क्षति हुई हो।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सी.ए. संख्या 85 और 86/1961

कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा पारित मूल आदेश संख्या 84 और 83/ 1953 अपील विरुद्ध निर्णय व डिक्री दिनांकित 23 नवंबर, 1954

अपीलकर्ताओं की ओर से - बी. सेन और पी.के. घोष (दोनों अपीलों में)।

सुकुमार घोष, प्रत्यर्थी संख्या 12 और 13 के लिए (सी.ए. संख्या 85/1961 में)

4 मार्च, 1964.

न्यायालय का फैसला सुब्बा राव जे. द्वारा सुनाया गया था।

सुब्बा राव, जे.

ये दोनों अपीलें धारा 35 बंगाल साहूकार अधिनियम, 1940 (बंगाल अधिनियम, 1940 के 10) के उल्लंघन में की गई अदालती बिक्री की वैधता पर सवाल उठाती हैं। जिसे इसके बाद अधिनियम कहा जाएगा।

दोनों अपीलों के तथ्य संक्षेप में इस प्रकार वर्णित हैं कि सिविल अपील संख्या 85/ 1961 में, प्रत्यार्थी संख्या 1, सुधीर चंद्र घोष ने मृतक प्रोवाश चंद्र मुखर्जी के पक्ष में 12,000/- रुपये की राशि के लिए पहला बंधक निष्पादित किया। प्रत्यार्थी संख्या 1 ने दूसरा, तीसरा और चौथा बंधक अपीलकर्ता के पक्ष में कुल रु. 7,700/- निष्पादित किया। उसने एक अन्य बन्धक वर्ष 1948 में प्रत्यार्थी संख्या 9 के पक्ष में निष्पादित किया, प्रत्यार्थी संख्या 2 और 3 ने, पहले बंधकदार की संपत्ति का प्रतिनिधित्व करते हुए, पहले बंधक को लागू कराने के लिए अधीनस्थ न्यायाधीश 7वें अतिरिक्त न्यायालय अलीपुर में टाइटल सूट नंबर 8/1948 दायर किया। उस मुकदमे में बंधक रखने वालों को भी पक्षकार बनाया गया था। 24 मई, 1948 को, मुकदमे में सहमति से एक प्रारंभिक डिक्री की गई, जिसके तहत निर्णित ऋणी को रुपये का 15.473-7-9 अपीलार्थी को 7 समान वार्षिक किश्तों में भुगतान करने का निर्देश दिया गया था। जैसा कि निर्णित ऋणी उक्त राशि का भुगतान करने में विफल रहा, निर्धारित समय पर 2 फरवरी 1949 को या उसके आसपास बंधक मुकदमे में एक अंतिम डिक्री पारित की गई। इसके बाद, डिक्री को 31 जनवरी 1950 को निष्पादन में डाल दिया गया, और उक्त में निष्पादन आवेदन में उक्त दावे की संतुष्टि के लिए बेची जाने वाली संपत्तियों की एक अनुसूची संलग्न की गई थी। अनुसूची में 11 संपत्तियां शामिल थीं और अपीलकर्ता ने उक्त संपत्तियों का मूल्यांकन दिया।

हालाँकि प्रत्यार्थी संख्या 1 को आदेश 21 नियम 66 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत एक नोटिस मिला। उसने मूल्यांकन पर कोई आपत्ति दर्ज नहीं की। हालाँकि प्रत्यार्थी संख्या 1 ने डिक््रीटल राशि का भुगतान करने का वादा करते हुए बिक्री को कई बार स्थगित करवाया, लेकिन वह ऐसा करने में विफल रहा। अंततः उक्त संपत्तियों में से दो को 23 जून, 1951 को बिक्री के लिए रखा गया, और उक्त संपत्तियों में से एक को प्रत्यार्थी संख्या 12 ने 11,800/- रुपये की राशि में और दूसरी, प्रत्यार्थी सं. 13 द्वारा 10,100/-रुपये की राशि में खरीदा था। प्रत्यार्थी संख्या 1 ने 21 जुलाई 1951 को, आदेश 21 नियम 90 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत उक्त बिक्री को रद्द करने के लिए निष्पादन न्यायालय में अन्य बातों के साथ-साथ, इस आधार पर कि अधिनियम की धारा 35 का अनुपालन नहीं किया गया, एक आवेदन दायर किया। विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश ने माना कि बिक्री के प्रकाशन और संचालन में कोई धोखाधड़ी नहीं हुई थी, बेची गई लॉट की कीमत उचित थी और अधिनियम की धारा 35 के उल्लंघन के कारण बिक्री खराब नहीं हुई थी। अपील पर उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ ने माना कि हालाँकि प्रत्यार्थी संख्या 1 को कोई गंभीर क्षति नहीं हुई थी, अधिनियम की धारा 35 के प्रावधान आज्ञापक थे और इसलिए, उक्त प्रावधानों का उल्लंघन बिक्री को अमान्य कर देगा। इस दृष्टि से, इसने बिक्री को रद्द कर दिया और अपीलकर्ता को ब्याज सहित पैसा वापस करने का निर्देश दिया।

अन्य सिविल अपील संख्या 86/1961 भी उसी निष्पादन कार्यवाही से उत्पन्न हुई। उक्त समझौता प्रारंभिक डिक्री के तहत निर्णित ऋणी 25,687/- रुपये की डिक्रीटल राशि का भुगतान करने के लिए सहमत हुआ। पहले बंधकग्रहिता की संपत्ति के निष्पादकों, प्रत्यर्थी सं. 2 और 3 को, चूंकि राशि का भुगतान नहीं किया गया था, इसलिए उक्त प्रत्यर्थीगण ने निष्पादन के लिए अतिरिक्त अधीनस्थ न्यायाधीश, अलीपुर के 7वें न्यायालय में एक आवेदन डिक्री के निष्पादन हेतु दायर किया। निष्पादन याचिका में 8 संपत्तियों का वर्णन किया गया था और उनका मूल्यांकन दिया गया था। निर्णित-ऋणी ने डिक्री-धारकों द्वारा दिए गए मूल्यांकन पर आपत्तियां दर्ज कीं, लेकिन उक्त संपत्तियों के मूल्यांकन के निपटान के लिए निर्धारित तिथि पर न तो निर्णित-ऋणी और न ही उनके वकील न्यायालय में उपस्थित हुए। विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश ने 11 फरवरी 1950 के अपने आदेश द्वारा निर्देश दिया कि डिक्रीधारकों और निर्णित ऋणी दोनों के मूल्यांकन को बिक्री उद्घोषणा में नोट किया जाए। इसके बाद बिक्री उद्घोषणा विधिवत जारी की गई और बिक्री की तारीख 11 मई, 1950 तय की गई। निर्णित ऋणी ने डिक्रीटल राशि का भुगतान करने का वादा करते हुए बिक्री के 15 स्थगन लिए, लेकिन ऐसा नहीं किया, अंत में संपत्तियों की बिक्री के लिए 23 जून, 1951 की तारीख तय की गई थी और उस तारीख को संपत्ति के दो लॉट निष्पादन में बेचे गए थे और अपीलकर्ताओं ने लॉट नंबर 1 को 14,000/- की कीमत पर खरीदा था और प्रत्यर्थी

नंबर 9 ने लॉट नंबर 2 को 19,600/- की कीमत पर खरीदा। 21 जुलाई, 1951 को, प्रत्यार्थी संख्या 1 ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 21 नियम 90 के तहत बिक्री को रद्द करने के लिए विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश के समक्ष एक आवेदन दायर किया।

अन्य आवेदन में उठाए गए लोगों के समान, सिविल अपील संख्या 85/ 1961 की विषय-वस्तु। उक्त आवेदन को विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश ने अन्य आवेदन के साथ सुना था। उन्हीं कारणों से, उन्होंने आवेदन को खारिज कर दिया। अपील, उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने अपील को संबंधित अपील के साथ सुना और बिक्री को रद्द कर दिया। वर्तमान अपीलें दोनों मामलों में उच्च न्यायालय के सामान्य निर्णय के विरुद्ध प्रमाण पत्र द्वारा दायर की गई हैं। दोनों अपीलों में अपीलकर्ताओं के विद्वान वकील श्री सेन का तर्क है कि क्या अधिनियम की धारा 35 आज्ञापक या निर्देशात्मक है कि उक्त प्रावधान के उल्लंघन में की गई बिक्री केवल अवैध है, लेकिन शून्य नहीं है और इसलिए, इसे केवल आदेश 21 नियम 90 सिविल प्रक्रिया संहिता में निर्धारित तरीके से और कारणों से अपास्त किया जा सकता है। चूंकि उत्तरदाता बिक्री की घोषणा तैयार करने में उपस्थित नहीं हुए थे, इसलिए उनके कहने पर बिक्री को रद्द नहीं किया जा सकता है।

तर्क की सराहना करने के लिए अधिनियम और संहिता के प्रासंगिक प्रावधानों को शुरुआत में पढ़ना आवश्यक और सुविधाजनक है।

अधिनियम की धारा 35

"तत्काल लागू किसी भी अन्य कानून में निहित किसी भी बात के बावजूद, किसी ऋण के संबंध में पारित डिक्री के निष्पादन में संपत्ति की इच्छित बिक्री की उद्घोषणा में निर्णित ऋणी की संपत्ति का केवल उतना ही हिस्सा निर्दिष्ट किया जाएगा जितना कि न्यायालय डिक्री को पूरा करने के लिए पर्याप्त कीमत पर बिक्री योग्य माना जाता है, और इस प्रकार निर्दिष्ट संपत्ति ऐसी कीमत पर नहीं बेची जाएगी जो ऐसी उद्घोषणा में निर्दिष्ट मूल्य से कम है:

परन्तु यदि इस प्रकार निर्दिष्ट संपत्ति के लिए उच्चतम राशि की बोली लगाई जाए इस प्रकार निर्दिष्ट मूल्य से कम। न्यायालय ऐसी राशि के लिए ऐसी संपत्ति बेच सकता है। यदि डिक्री-धारक निर्धारित राशि में से उतनी रकम छोड़ने के लिए लिखित में सहमति देता है जो उच्चतम राशि की बोली और कीमत के बीच के अंतर के बराबर हो।"

सिविल प्रक्रिया संहिता आदेश 21 नियम 64:

डिक्री निष्पादित करने वाला कोई भी न्यायालय आदेश दे सकता है कि उसके द्वारा कुर्क की गई और बिक्री के लिए उत्तरदायी किसी भी संपत्ति, या उसके ऐसे हिस्से को, जो डिक्री को संतुष्ट करने के लिए

आवश्यक लग सकता है, बेचा जाएगा, और ऐसी बिक्री की आय, या उसका पर्याप्त हिस्सा, इसे प्राप्त करने के लिए डिक्री के तहत हकदार पक्षकार को भुगतान किया जाएगा।

आदेश 21, आदेश 66.

(1) जहां किसी डिक्री के निष्पादन में किसी संपत्ति को सार्वजनिक नीलामी द्वारा बेचने का आदेश दिया जाता है, न्यायालय ऐसे न्यायालय की भाषा में इच्छित बिक्री की उद्घोषणा कराएगा।

(2) ऐसी उद्घोषणा डिक्री-धारक और निर्णय देनदार को नोटिस के बाद तैयार की जाएगी और बिक्री का समय और स्थान बताएगी, और यथासंभव उचित और सटीक रूप से निर्दिष्ट करेगी-- (ए) बेची जाने वाली संपत्ति;

आदेश 21, नियम 90.

(1) जहां किसी डिक्री के निष्पादन में कोई अचल संपत्ति बेची गई है, डिक्री धारक, या संपत्ति के दर योग्य वितरण में हिस्सेदारी का हकदार कोई व्यक्ति या जिसके हित बिक्री से प्रभावित होते हैं, वह न्यायालय में आवेदन कर सकता है इसके प्रकाशन या संचालन में किसी महत्वपूर्ण अनियमितता या धोखाधड़ी के आधार पर या इसके नियम 22 के अनुसार उसे नोटिस जारी करने में विफलता के आधार पर बिक्री को रद्द कर दिया जाए।

परन्तु (1) ऐसी अनियमितता के आधार पर कोई भी बिक्री रद्द नहीं की जाएगी। धोखाधड़ी या विफलता, जब तक कि तथ्यों के साबित होने पर न्यायालय संतुष्ट न हो कि आवेदक को ऐसी अनियमितता, धोखाधड़ी या विफलता के कारण पर्याप्त चोट लगी है,

(ii) बिक्री की घोषणा में किसी भी दोष के आधार पर कोई भी बिक्री रद्द नहीं की जाएगी। . किसी ऐसे व्यक्ति के उदाहरण पर जो नोटिस के बाद उद्घोषणा तैयार करने में उपस्थित नहीं हुआ या किसी ऐसे व्यक्ति के उदाहरण पर जिसकी उपस्थिति में उद्घोषणा तैयार की गई थी, जब तक कि उस समय जिस दोष पर भरोसा किया गया था उसके संबंध में उसके द्वारा आपत्ति नहीं की गई थी।

आदेश 21 नियम 64 सिविल प्रक्रिया संहिता के अनुसार, निष्पादन न्यायालय आदेश दे सकता है कि उसके द्वारा कुर्क की गई और बिक्री के लिए उत्तरदायी किसी भी संपत्ति या उसके ऐसे हिस्से को, जो डिक्री को संतुष्ट करने के लिए आवश्यक लगे, बेचा जाएगा। संहिता के उक्त आदेश के 66 के तहत जब किसी डिक्री के निष्पादन में किसी संपत्ति को सार्वजनिक नीलामी में बेचने का आदेश दिया जाता है तो न्यायालय इच्छित बिक्री की उद्घोषणा कराएगी और ऐसी उद्घोषणा कराएगी। दूसरों के बीच, बेची जाने वाली संपत्ति को यथासंभव निष्पक्ष और सटीक रूप से निर्दिष्ट किया जाएगा और ऐसी उद्घोषणा डिक्री-धारक और उप-(4) के

तहत निर्णित ऋणी को नोटिस के बाद तैयार की जाएगी, न्यायालय बुला सकता है और जांच कर सकता है किसी भी व्यक्ति या उससे संबंधित किसी भी दस्तावेज को अपने कब्जे में या उससे संबंधित किसी भी दस्तावेज को प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है।

उक्त प्रावधानों के तहत न्यायालय के पास संलग्न पूरी संपत्ति या उसके एक हिस्से की बिक्री का निर्देश देने की शक्ति है जो डिक्री को संतुष्ट करने के लिए पर्याप्त है और यह डिक्री धारक दोनों को नोटिस देने के बाद तय की गई उद्घोषणा में बेचने के लिए निर्देशित उक्त संपत्ति को भी निर्दिष्ट करेगा और निर्णित-ऋणी अधिनियम की धारा 35 के तहत एक ऋण के संबंध में पारित डिक्री के निष्पादन में संपत्ति की इच्छित बिक्री की उद्घोषणा को निपटाने में न्यायालय पर एक कर्तव्य डाला जाता है, जिस पर अधिनियम केवल निर्दिष्ट करने के लिए लागू होता है। निर्णित ऋणी की अधिकांश संपत्ति, जैसा कि न्यायालय डिक्री को पूरा करने के लिए पर्याप्त कीमत पर बिक्री योग्य मानती है, न कि निर्दिष्ट संपत्ति को उस कीमत पर बेचने के लिए जो ऐसी उद्घोषणा में निर्दिष्ट कीमत से कम है। यह प्रावधान वास्तव में आदेश 21 नियम 66 सिविल प्रक्रिया संहिता का वैधानिक जोड़ है। दरअसल, इस प्रावधान को उक्त नियम में एक अन्य खंड के रूप में जोड़ा जा सकता था। यह वैधानिक प्रावधान उद्घोषणा के क्षेत्र से संबंधित है। नियम ऐसा कहता है. उक्त दो शर्तें बिक्री के प्रकाशन या संचालन के मामले में न्यायालय द्वारा उठाए जाने वाले कदम भी हैं।

यदि कोई बिक्री उक्त शर्तों का अनुपालन किए बिना की जाती है, तो इससे प्रभावित पक्ष के पास बिक्री को रद्द कराने का क्या उपाय है?

आदेश 21, नियम 90 संहिता में उपाय का प्रावधान है। यह कहते हैं कि वह व्यक्ति जिसके हित बिक्री से प्रभावित हो रहे हैं, वह बिक्री को प्रकाशन या संचालन में महत्वपूर्ण अनियमितता या धोखाधड़ी के आधार पर या नियम द्वारा अपेक्षित उसे नोटिस जारी करने में विफलता के आधार पर बिक्री को रद्द करने के लिए न्यायालय में आवेदन कर सकता है। आदेश के नियम 22 चूंकि उक्त शर्तों का अनुपालन न करना आदेश 21 नियम 90 के पहले प्रावधान के तहत न्यायालय द्वारा बिक्री के प्रकाशन या संचालन में एक महत्वपूर्ण अनियमितता है। बिक्री को तब तक रद्द नहीं कर सकती जब तक कि वह संतुष्ट न हो जाए कि आवेदक को ऐसी अनियमितता के कारण पर्याप्त क्षति हुई है। इसके अलावा, उक्त नियम के दूसरे प्रावधान के तहत, किसी भी व्यक्ति के कहने पर, नोटिस के बाद, बिक्री की उद्घोषणा में किसी भी दोष के आधार पर कोई भी बिक्री अपास्त नहीं की जाएगी। उद्घोषणा तैयार करने में या किसी ऐसे व्यक्ति की उपस्थिति में उपस्थित नहीं हुआ, जिसकी उपस्थिति में उद्घोषणा तैयार की गई थी, जब तक कि उद्घोषणा तैयार करने के समय जिस दोष पर भरोसा किया गया था, उसके संबंध में उसके द्वारा आपत्ति नहीं की गई थी। शीघ्र ही कहा गया, अधिनियम की धारा 35 के प्रावधानों का अनुपालन न होना। बिक्री के प्रकाशन या संचालन में दोष या अनियमितता

है। एक पक्ष जिसने उद्घोषणा की सूचना प्राप्त की, लेकिन उद्घोषणा तैयार करने में उपस्थित नहीं हुआ या उक्त दोष पर आपत्ति नहीं जताई, वह आदेश 21 नियम 90 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत आवेदन नहीं रख सकता है। भले ही वह कर सकता हो, बिक्री को तब तक रद्द नहीं किया जा सकता जब तक कि उक्त दोष या अनियमितता के कारण उसे पर्याप्त क्षति न लगी हो।

इस प्रश्न पर बार में उद्धृत निर्णयों में विचारों का विचलन परिलक्षित होता है। आशाराम ठिकदार बनाम बिजय सिंह चोपड़ा में जस्टिस मुखर्जी और जस्टिस पाल, ने निष्पादन न्यायालय के आदेश को रद्द कर दिया और मामले को उस न्यायालय में वापस भेज दिया, क्योंकि उक्त न्यायालय ने उद्घोषणा में दी गई संपत्ति का मूल्यांकन शामिल किया था। निर्णित ऋणी के साथ-साथ डिक्री-धारक द्वारा दिया गया और उसने, जैसा कि अधिनियम की धारा 35 के तहत करना चाहिए, उस संपत्ति की कीमत निर्धारित नहीं की, जिसे उचित साक्ष्य पर बिक्री के लिए रखा जाना था। इस निर्णय का हमारे सामने उठाए गए प्रश्न से कोई प्रासंगिकता नहीं है, क्योंकि उच्च न्यायालय के समक्ष अपील आदेश के विरुद्ध थी निष्पादन न्यायालय द्वारा दायर आवेदन को खारिज कर दिया गया। निर्णित ऋणी अधिनियम की धारा 35 के प्रावधानों के अनुसार बेची जाने वाली संपत्ति का सीमांकन करने का अनुरोध करता है।

यह प्रश्न कि क्या उक्त प्रावधानों के अनुपालन न करने पर की गई बिक्री को आदेश 21 नियम 90 सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों से अलग रखा जा सकता है। अब हमारे सामने जो प्रश्न था वह सीधे कलकत्ता उच्च न्यायालय की एक डिवीजन बेंच के समक्ष निर्णय के लिए आया, जिसमें जस्टिस अकरम और जस्टिस चक्रवर्ती शामिल थे, मणिंद्र चंद्र बनाम जगदीश चंद्र में जस्टिस चक्रवर्ती ने फैसले में निर्णित ऋणी द्वारा अधिनियम की धारा 35 के प्रावधानों का अनुपालन न करने के आधार पर बिक्री को रद्द करने की मांग की उठाई गई आपत्ति को इस प्रकार तय किया।

"यह (अधिनियम की धारा 35) बिक्री उद्घोषणा की सामग्री से संबंधित एक प्रावधान है और मेरे विचार से इसका प्रभाव, संशोधन या पूरक करना है। आदेश 21 नियम 66(2) (ए) जो न्यायालय को बिक्री उद्घोषणा में "बेची जाने वाली संपत्ति" निर्दिष्ट करने का निर्देश देता है। बेची जाने वाली सम्पत्ति को निर्दिष्ट करने में धारा 35 का अनुपालन न करने के संबंध में कोई आपत्ति, मेरे विचार में आदेश 21 नियम 90 सी.पी.सी. के दूसरे परंतुक के अर्थ में बिक्री उद्घोषणा में एक दोष है। एक आपत्ति कि बिक्री उद्घोषणा बंगाल साहूकार अधिनियम की धारा 35 के अनुरूप नहीं थी। निर्णित ऋणी आदेश 21 नियम 90 के तहत आवेदन कर लाभ नहीं उठा सकता है। यदि वह बिक्री उद्घोषणा तैयार करते समय उपस्थित था और उसने उस समय ऐसी कोई आपत्ति नहीं उठाई थी, न ही

वह निर्णित ऋणी का लाभ उठा सकता है, जो नोटिस प्राप्त करने के बाद बिक्री उद्घोषणा तैयार करने में उपस्थित नहीं हुआ था।"

हम इस विचार से सहमत हैं। मनिरुद्दीन अहमद बनाम उमाप्रसन्ना में गुहा और बनर्जी, जेजे की कलकत्ता उच्च न्यायालय की एक अन्य खंडपीठ ने इस विषय पर पूरे मामले के कानून पर विचार किया, जिसमें इस अपील की विषय वस्तु भी शामिल है और अपील के तहत निर्णय में एस. आर. दास गुप्ता और मल्लिक, जे.जे. द्वारा व्यक्त विचार से भिन्न था और मनिद्र चंद्र बनाम जगदीश चंद्र में अकरम और चक्रवर्ती, जे.जे. द्वारा व्यक्त विचार से सहमत था। कहा गया निर्णय उस दृष्टिकोण के अनुरूप हैं जो हमने पहले व्यक्त किया है। इसके विपरीत दृष्टिकोण उच्च न्यायालय द्वारा बरकरार रखा गया है वर्तमान मामला इस सिद्धांत पर है कि बिक्री अधिनियम की धारा 35 के प्रावधानों के उल्लंघन में हुई, अमान्य थी और इसलिए, आदेश 21 नियम 90 सिविल प्रक्रिया संहिता के अर्थ के भीतर बिक्री को अपास्त करने का कोई सवाल ही उत्पन्न नहीं होता। इससे यह सवाल उठता है कि क्या ऐसी बिक्री निरर्थक है। यदि किसी कानून का प्रावधान केवल निर्देशिका है, तो प्रावधान के उल्लंघन में किया गया कार्य स्पष्ट रूप से शून्य नहीं है। अधिनियम की धारा 35 को एक आज्ञापक रूप में शामिल किया गया है और यह न्यायालय पर बिक्री होने से पहले इस प्रावधान का अनुपालन करने का कर्तव्य डालता है। प्रथम

दृष्टया प्रावधान आज्ञापक है, किसी भी दर पर, हम इन अपीलों के प्रयोजन के लिए इसे ऐसा ही मानेंगे।

फिर भी, यह प्रश्न उठता है कि क्या आज्ञापक प्रावधान का उल्लंघन करके किया गया कोई कार्य बलपूर्वक अमान्य है। आशुतोष सिकंदर वी बिहारी लाल कीर्तनिया में, मुकर्जी, जे. ने शून्यता और अनियमितताओं पर मैकनामारा का उल्लेख करने के बाद कहा:

"-----शून्यता और अनियमितता के बीच कोई कठोर और तेज़ रेखा नहीं खींची जा सकती; लेकिन इतना स्पष्ट है कि अनियमितता कानून के नियम से विचलन है जो कार्यवाही के लिए आधार या अधिकार को नहीं छीनती है, या इसके पूरे संचालन पर लागू नहीं होती है, जबकि शून्यता एक ऐसी कार्यवाही है जो बिना किसी आधार के की जाती है यह, या इतना अनिवार्य रूप से दोषपूर्ण है कि इसका कोई लाभ या प्रभाव नहीं है, या शून्य है।

कोई प्रावधान एक श्रेणी के अंतर्गत आता है या किसी अन्य के अंतर्गत आता है, यह समझना आसान नहीं है, लेकिन अंतिम विश्लेषण में यह किसी विशेष प्रावधान की प्रकृति, दायरे और उद्देश्य पर निर्भर करता है। एक व्यावहारिक परीक्षण निर्धारित किया गया है। होम्स बनाम रसेल में जस्टिस कोलरिज द्वारा, जिसमें लिखा है:

"कभी-कभी अनियमितता और शून्यता के बीच अंतर करना मुश्किल होता है; लेकिन यह निर्धारित करने का सबसे सुरक्षित नियम कि अनियमितता क्या है और अशक्तता क्या है, यह देखना है कि क्या पक्षकार आपत्ति को माफ कर सकता है; यदि वह इसे माफ कर सकता है, तो यह एक अनियमितता है; यदि वह ऐसा नहीं कर सकता है, तो यह शून्यता है।"

छूट एक ज्ञात अधिकार का जानबूझकर किया गया त्याग है, लेकिन स्पष्ट रूप से क्षेत्राधिकार पर आपत्ति को माफ नहीं किया जा सकता है, क्योंकि सहमति किसी न्यायालय को क्षेत्राधिकार नहीं दे सकती है जहां कोई नहीं है। यहां तक कि अगर अंतर्निहित क्षेत्राधिकार है, तो भी निश्चित है प्रावधानों को माफ नहीं किया जा सकता है। मैक्सवेल ने अपनी पुस्तक "कानूनों का निर्वचन", 11 वां संस्करण, पृष्ठ 375, इस नियम का वर्णन इस प्रकार करता है:

"एक और कहावत जो वैधानिक प्रावधान के गैर-पालन को मंजूरी देती है, वह यह है कि क्यूलिबेट लाइसेंस रेनंटियारे जूरी प्रो से इंद्रोडक्टो: हर किसी को पूरी तरह से बनाए गए कानून या नियम के लाभ को माफ करने और माफ करने के लिए सहमत होने का अधिकार है अपनी निजी क्षमता में व्यक्ति के लाभ और सुरक्षा के लिए, जिसे किसी भी सार्वजनिक

अधिकार या सार्वजनिक नीति का उल्लंघन किए बिना दूर किया जा सकता है।"

इसी नियम को "क्रेज़ ऑन स्टैच्यूट लॉ", 6 वें संस्करण, पृष्ठ 269 पर दोहराया गया है। इस प्रकार

"एक सामान्य नियम के रूप में, कानूनी कार्यवाही को अधिकृत करने वाले कानूनों द्वारा लगाई गई शर्तों को न्यायालय को अधिकार क्षेत्र देने के लिए अपरिहार्य माना जाता है। लेकिन अगर ऐसा प्रतीत होता है कि विधायिका द्वारा वैधानिक शर्तें केवल सुरक्षा या लाभ के लिए डाली गई थीं कार्रवाई में शामिल पक्ष स्वयं, और इसमें कोई सार्वजनिक हित शामिल नहीं है, ऐसी शर्तों को अपरिहार्य नहीं माना जाएगा, और कोई भी पक्ष न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को प्रभावित किए बिना उन्हें माफ कर सकता है। ए.एल.ए.आर. वेल्लायन चेट्टियार बनाम मद्रास सरकार में न्यायिक समिति बताया गया कि प्रस्तावों के बीच कोई असंगतता नहीं थी कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 80 के प्रावधान अनिवार्य थे और उन्हें न्यायालय द्वारा लागू किया जाना चाहिए और उन्हें उस प्राधिकारी द्वारा माफ किया जा सकता है जिसके लाभ के लिए उन्हें प्रदान किया गया था। उस मामले में न्यायिक समिति ने माना कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 80 स्पष्ट और अनिवार्य थी; लेकिन फिर भी यह माना गया कि इसे

उस प्राधिकारी द्वारा माफ किया जा सकता है जिसके लाभ के लिए यह प्रदान किया गया था।

अधिनियम की धारा 35 के संदर्भ में कानून के इस पहलू पर गया प्रसाद बनाम सेठ धनरूपवाल भंडारी के मामले में कलकत्ता उच्च न्यायालय की एक डिवीजन बेंच द्वारा विचार किया गया था। इस तर्क से निपटते हुए पी.एन. मुखर्जी, जे. ने न्यायालय की ओर से बोलते हुए कहा:

"यह सच है कि बंगाल साहूकार अधिनियम की धारा 35 न्यायालय पर कर्तव्य लगाती है लेकिन ऐसा कर्तव्य पूरी तरह से निर्णित ऋणी के लाभ-निजी लाभ-के लिए है। इसलिए वह इस लाभ को माफ करने के लिए खुला है, या, दूसरे शब्दों में, न्यायालय द्वारा उस वैधानिक प्रावधान का पालन न करने पर अपनी आपत्ति को माफ करने के लिए ---"

गुहा, बनर्जी, जे.जे. ने मनिन अहमद बनाम उमाप्रसन्ना में इसी प्रभाव को व्यक्त किया। इस प्रकार,

"साहूकारों पर नियंत्रण के लिए बेहतर प्रावधान करने तथा साहूकारी के नियमन एवं नियंत्रण के उद्देश्य से अधिनियमित ऋणदाता अधिनियम 1940 के पीछे निश्चित रूप से एक सार्वजनिक नीति है। लेकिन इसके कुछ प्रावधान, और उनमें से धारा 35 एक, व्यक्तिगत निर्णय देनदारों के लाभ के लिए हैं और उनके पीछे कोई सार्वजनिक नीति नहीं है। ऐसे

प्रावधानों को उस व्यक्ति द्वारा माफ किया जा सकता है जिसके लाभ के लिए इन्हें अधिनियमित किया गया था।"

शेओ दयाल नारायण बनाम मुसम्मत मोती कुएर में पटना उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ। प्रावधानों के संदर्भ में मेरेडिथ, जे. के माध्यम से बोलते हुए बिहार साहूकार (लेनदेन का विनियमन) अधिनियम, 1939 की धारा 13, जो कि बंगाल साहूकार अधिनियम, 1940 की धारा 35 के प्रावधानों के साथ समरूप है, ने इस तर्क को खारिज कर दिया कि इसके उल्लंघन में की गई बिक्री निम्नलिखित शब्दों में शून्यता थी। "बिक्री अवैध हो सकती है, सीमित अर्थों में कि यह एक अनिवार्य वैधानिक प्रावधान के विपरीत तरीके से आयोजित की गई थी, हालांकि, उस प्रावधान का न्यायालय के अधिकार क्षेत्र से कोई संदर्भ नहीं है। इसका यह तर्क कि बिक्री ऐसी थी जिसे रोकने की संबंधित न्यायालय के पास कोई शक्ति नहीं थी।

जहां न्यायालय अंतर्निहित क्षेत्राधिकार के बिना कार्य करती है, वहां प्रभावित पक्ष छूट द्वारा क्षेत्राधिकार प्रदान नहीं कर सकता है, जो उसने नहीं किया है। जहां ऐसे क्षेत्राधिकार की आवश्यकता नहीं है, वहां निर्देशिका प्रावधान को स्पष्ट रूप से माफ किया जा सकता है। लेकिन एक आज्ञापक प्रावधान को केवल तभी माफ किया जा सकता है यदि इसकी कल्पना सार्वजनिक हित में नहीं, बल्कि इसे माफ करने वाली पार्टी के हित में की

गई हो। वर्तमान मामले में निष्पादन न्यायालय के पास संपत्ति बेचने का अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र था। हमने यह मान लिया है कि अधिनियम की धारा 35 एक आज्ञापक प्रावधान है। यदि हां, तो प्रश्न यह है कि क्या उक्त प्रावधान जनता के हित में है या प्रावधान का पालन न होने से प्रभावित व्यक्ति के हित में है। यह सच है कि अधिनियम के कई प्रावधानों की कल्पना जनता के हित में की गई थी, लेकिन अधिनियम की धारा 35 के बारे में ऐसा नहीं कहा जा सकता है। जिसका उद्देश्य वास्तव में निर्णय-ऋणी के हितों की रक्षा करना और यह देखना है कि ऋण का भुगतान करने के लिए आवश्यक उसकी संपत्ति का एक बड़ा हिस्सा बेचा न जाए। कई स्थितियों की कल्पना की जा सकती है जब निर्णित ऋणी अधिनियम की धारा 35 के तहत उसे दिए गए लाभ का लाभ नहीं लेना चाहता है। उदाहरण के लिए, यदि न्यायालय द्वारा बिक्री के लिए काटी गई संपत्ति को उसकी बाकी संपत्ति से अलग कर दिया जाता है, शेष संपत्ति का मूल्य उक्त नक्काशी से हानिकारक रूप से प्रभावित हो सकता है, इस स्थिति में वह प्राथमिकता दे सकता है। उनकी पूरी संपत्ति बेच दी जाये ताकि उन्हें संपत्ति का वास्तविक मूल्य पता चल सके और बिक्री मूल्य का कुछ हिस्सा डिफ़ॉल्ट राशि के लिए भुगतान किया जा सके। उसे स्पष्ट रूप से अपने नुकसान के लिए संपत्ति के एक हिस्से की बिक्री के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता है। उसके लाभ के लिए किए गए प्रावधान का अर्थ इस तरह से नहीं लगाया जा सकता है कि यह उसके नुकसान के लिए

काम करेगा। लेकिन ऐसा कहा जाता है कि अधिनियम की धारा 35 का प्रावधान एक विपरीत इरादे को इंगित करती है।

उस प्रावधान के तहत, "यदि इस प्रकार निर्दिष्ट संपत्ति के लिए उच्चतम बोली राशि निर्दिष्ट मूल्य से कम है, तो न्यायालय ऐसी संपत्ति को इतनी राशि में बेच सकता है, यदि डिक्री-धारक लिखित रूप में डिक्री की गई राशि में से इतनी राशि छोड़ने के लिए सहमति देता है। उच्चतम बोली और निर्दिष्ट मूल्य के बीच के अंतर के बराबर।" यह केवल डिक्री-धारक को दिया गया एक विकल्प है: वह इस विकल्प का उपयोग कर सकता है, यदि वह एक आकस्मिकता में पूरी बिक्री कार्यवाही को फिर से पूरा करना पसंद नहीं करता है, तो यह प्रावधान निर्णित ऋणी के लाभ के लिए भी काम करता है, क्योंकि वह चाहेगा कि उसके ऋण के कुछ भाग से छुटकारा पाया जाए। लेकिन किसी भी तरह यह यह नहीं दर्शाता है कि मुख्य प्रावधान निर्णित ऋणी के लाभ के लिए नहीं है। इसलिए, हम अधिनियम की धारा 35 के वास्तविक गठन से संतुष्ट हैं। यह केवल निर्णित ऋणी के लाभ के लिए है और इसलिए, वह अधिनियम की धारा 35 के तहत उसे दिए गए अधिकार को माफ कर सकता है।

यदि यह कानूनी स्थिति है, आदेश 21 नियम 90 सिविल प्रक्रिया संहिता तुरंत आकर्षित होते हैं। न्यायालयों का समवर्ती निष्कर्ष यह है कि अधिनियम की धारा 35 के प्रावधानों का पालन न करने के कारण निर्णित

ऋणी को कोई सारभूत क्षति नहीं हुई, इसके अलावा, हालांकि एक मामले में निर्णित ऋणी को नोटिस दिया गया था, उसने बिल्कुल भी आपत्ति दर्ज नहीं की और दूसरे मामले में निर्णित ऋणी ने आपत्तियाँ दर्ज कीं, लेकिन वह उद्घोषणा तैयार करने में शामिल नहीं हुआ। इसलिए, बिक्री उक्त प्रावधान की शर्तों के तहत अपास्त किए जाने योग्य नहीं है,

जिसके परिणामस्वरूप उच्च न्यायालय के आदेशों को अपास्त किया जाता है और अतिरिक्त अधीनस्थ न्यायाधीश के आदेशों को बहाल किया जाता है। अपीलार्थी को उसकी लागत प्रथम प्रत्यर्थी से मिलेगी जो सुनवाई शुल्क का एक सेट होगी।

अपील स्वीकार।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक अमर वर्मा, (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।